Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
ISSN 2320–7175 | Volume 09, Issue 01, June 2021
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2021
UGC CARE listed Journal

भक्ति संगीत में अध्यात्म का महत्व

Samita Uday Kolhatkar[1], Dr. Rajesh Kelkar[2], Dr, Kedar Mukadam[3]

1 Research Scholar, Voacal Dept. Faculty of Performing Arts, M. S. University of Baroda, Vadodara
2 Dean, Faculty of Performing Arts, M.S. University of Baroda, Vadodara
3 Assistant Professor Faculty of Performing Arts, M.S. University of Baroda, Vadodara

शोध सार

संगीत स्वयं ही भक्ति स्वरूप है। जिस प्रकार से भक्ति के अलग–अलग आयाम होते हैं वैसे ही संगीत के भी कई प्रकार होते हैं। भक्ति संगीत का अस्तित्व अध्यात्म से जुड़ा है। भक्ति और संगीत दोनों ही का मुख्य उद्देश्य आत्मानंद की प्राप्ति है। आध्यात्मिक उन्नति के लिए संगीत विषेश रूप से महत्वपूर्ण है। हमारे भारतीय शास्त्रीय संगीत के कई राग ऐसे हैं जिनके 'मूल स्वर' ही 'भक्तिमय' है। जैसे– तोड़ी, भैरव, ललत, भैरवी, चारूकेशी, परमेश्वरी आदि। इन सभी रागों से जनित संगीत में भी भक्ति का भाव अनुभूत होता है। इसके अतिरिक्त हमारे आध्यात्मिक उन्नत संतों ने संगीत के उपयोग से आत्मानंद की प्राप्ति की। केवल भक्तिपूर्ण शब्द ही भक्ति की उत्कटता के लिए पर्याप्त नहीं है। उसमें भाव का होना अत्यंत आवश्यक है।

बीज शब्दः निष्काम भक्ति, भक्ति संगीत, सामवेद, अध्यात्म।

भूमिका

संगीत मनुष्य की एक नैसर्गिक अभिव्यक्ति है। हमारे भारतवर्ष में आज तक बहने वाली संगीत सरिता का मूल 'सामवेद' को माना गया है। श्रीमद् भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण का कथन–''वेदनां सामवेदाऽस्मि'' से हम यह जान सकते है कि संगीत सृष्टि का आदि तत्व है। अर्थात् ''सामवेद'' साक्षात् ईश्वर का स्वरूप है। तद्उपरांत नारद संहिता के अनुसार –

> ''नाहं वसामि वैकुंठे योगिनां हृदये न वा ।
>
> मदभक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिश्टामि नारदः ।।''[1]

उपरोक्त श्लोक द्वारा भी संगीत की महत्ता सिद्ध होती है।

हमारे वैदिक ग्रंथों में गीत, वाद्य, नृत्य आदि की चर्चा की गई है। परंतु सामवेद मुख्य रूप से गान के लिए ही प्रसिद्ध है। अर्थात् सामवेद गेय है तथा सामगान का प्रमाणभूत तत्व स्वर है। सामगान का प्रारंभ 'ओमकार' से किया जाता है तथा अंत भी इसी स्वर से होता है।[2] उसके अंतर्गत ऋग्वेद की ही सारी ऋचाएं (केवल 75 नई ऋचाएं है) या सूक्तों का गान किया गया है। अतः सामवेद, ऋग्वेद का ही गेय रूपांतर मात्र है। 'स्तुति' यानि 'सोम स्तुति' सामवेद का विषय है अर्थात् 'उदगाता' द्वारा उचित स्वर में किया गया मंत्र गायन। इस प्रकार से भारतीय संगीत का मूल स्त्रोत सामगान ही है यह स्पष्ट होता है। तद्उपरांत भारतीय संगीत शास्त्र के सप्त स्वरों के नाम क्रमशः – क्रुष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, मंद, अतिस्वार आदि भी सामवेद से मिलते हैं।[3]

संगीत के इस शास्त्रीय पक्ष के उपरांत अनादिकाल से ही हमारे ऋषि–मुनियों ने संगीत को भक्ति एवं ईश्वर प्राप्ति का साधन माना है। आध्यात्मिक साधना के ज्ञानयोग, कर्मयोग, नादयोग, भक्तियोग आदि प्रमुख मार्ग सर्वविदित है और भक्तियोग इसमें सर्वश्रेष्ठ है।

किसी मनुष्य ने ज्ञानयोग अंतर्गत ग्रंथगत ज्ञान को प्राप्त किया एवं कर्मयोग के अनुसार अनेक आपत्तियों को सहन करके जरूरी कर्म भी किया परंतु इसको करते वक्त ईश्वर या कोई परमात्मा के प्रति अगर प्रेम एवं समर्पण का भाव न हो तो वे ज्ञान और कर्म दोनों ही व्यर्थ हो जाते हैं। वैसे तो ज्ञानयोग तथा कर्मयोग में किया गया प्रत्येक कार्य ईश्वरार्थ होता है। पातंजल योगसूत्र में भी ''ईश्वर के प्रति भक्ति से समाधि सिद्धि' की बात कही गई है।[4] अतः किसी भी प्रकार की अध्यात्म साधना में भक्तियोग प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

''भक्ति'' शब्द की परिभाषा अनेक संतो एवं विद्वानों ने दी है। व्यक्तिगत रूप से स्वयं के आदर्श के प्रति श्रद्धा रखकर समर्पण भाव से व्यवहार करना भक्ति है। अर्थात् शुद्ध प्रेमभाव से किया गया समर्पण भक्ति है। संगीत के आदि आचार्य देवर्षी नारदजी के अनुसार, ''ईश्वर के प्रति परम अनुराग ही भक्ति है।''[5] ऐसी भक्ति को प्राप्त करके मनुष्य की काम वासनाएं नष्ट होकर वह सिद्ध हो जाता है। नारद भक्तिसूत्र के अनुसार, "भक्ति एवं भक्त का वर्णन करते हुए, नादरजी लिखते हैं कि ऐसा भक्त अपने समस्त कर्म ईश्वर को अर्पण करता है और ईश्वर का विस्मरण होने पर व्याकुल होता है, यही भक्ति है। ऐसी ही भक्ति ब्रज गोपियों में थी। श्रीमद् भागवद महापुराण तथा रामचरितमानस में नवधा भक्ति के अंतर्गत संकीर्तन–ईश्वर गुणगान करने का उल्लेख किया गया है। संगीत के आदि आचार्य नारदमुनि अपने भक्तिसूत्र में कहते हैं कि भगवान के गुण के श्रवण और कीर्तन से भक्ति का साधन सम्पन्न होता है। कीर्तन की परिभाषा में भी संगीत को महत्वपूर्ण अंग के रूप में बताया गया है। जैसे–

''नामलीलागुणदीनामुच्चैर्भाशा तु कीर्तनम्'' [6]

अर्थात् भगवान के नाम, गुण, लीला आदि का उच्च वाणी में पाठ करना कीर्तन कहलाता है। श्रीमद् भगवद में भी नौ प्रकार के गीत हैं जो सभी 'प्रेम भक्ति' का निर्देशन करते हैं।

इस प्रकार से हमारी भारतीय संस्कृति, ऋषि–मुनि, संत परंपरा, अनेक पवित्र धर्मग्रंथ और संगीत जैसे शाश्वत तत्वों से समृद्ध होते हुए भी 6–7 वीं शताब्दी में हमारे वैदिक हिन्दु धर्म में कुछ कमियाँ उभर आयी। परिणामस्वरूप हिन्दु धर्म क्षीण होने लगा और ''जैन'' एवं ''बुद्ध'' जैसे दो नए धर्मो का विस्तार दृष्टिगोचर हुआ। इस परिस्थिति में हिन्दु धर्म की जड़ें मजबूत करने के लिए भारत के विभिन्न प्रांतों से अनेक संत उभर आएं और उन्होंने केवल भक्ति के माध्यम से धर्म की कुरीतियाँ दूर करने का प्रयास किया। यह भक्ति आंदोलन उत्तरोत्तर फैल गया और उसी के परिणामस्वरूप हमारी वैभवशाली भक्ति परंपरा एवं भक्ति संगीत की अनुभूति का सद्भाग्य हमें आज प्राप्त हुआ।

ईश्वरोपासना के लिए की गई प्रार्थना, स्तुति, भजन आदि सभी अनन्य प्रेम से अपने आराध्य में या भगवान में एकरूप होना ही भक्ति है। गोस्वामी तुलसीदासजी के शब्दों में अनन्य भक्ति यानि–

''अर्थ न धर्म न काम रूचि, पद न चहऊँ निरबान ।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
ISSN 2320–7175 | Volume 09, Issue 01, June 2021
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2021
UGC CARE listed Journal

जनम जनम रति रामपद, यह वरदान न आन ।।''[7]

अर्थात् तुलसीदासजी कहते हैं कि ''मुझे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष किसी में भी रुचि नहीं है परंतु हर एक जन्म में श्रीराम के चरणों में मेरा प्रेम रहे यही वरदान मैं मांगता हूँ।'' यही निष्काम भक्ति है और यही भक्ति साधक को अध्यात्म मार्ग की और उन्मुख करती है। भक्ति से साधक का अंतःकरण पवित्र हो जाता है। छल–कपट से साधक ऊपर उठाने लगता है और ईश्वर क्रिया से आत्मा साक्षात्कार की तरफ आगे बढ़ता है।

ऐसी ही निष्काम भक्ति में प्रेम की अभिव्यक्ति के लिए संगीत अत्यंत प्रभावी माध्यम है। संगीत का प्रभाव विश्वव्यापी है। संगीत के कोई भी स्वरूप को गाते वक्त गायक–कलाकार तो उसके साथ एकरूप हो ही जाता है परंतु संगीत को श्रवण करते वक्त भी मन की सारी वृत्तियाँ अन्य विषयों से हटकर केवल श्रवणेंद्रिय में केंद्रीभूत होती है। इस वाक्य को पुष्टि देने के लिए शोधार्थी पं. भीमसेन जोशी जी का एक प्रसंग उल्लेखित कर रहा है। इंदौर के शनैष्चर मंदिर में पण्डितजी कि 'संतवाणी' का कार्यक्रम था। उस पूरे चौराहे पर काफी भीड़ जमी हुई थी। संतवाणी मराठी भाषा में होने के बावजूद भी एक मराठी जवान फूट–फूट कर रो रहा था। बाद में लेखक ने उसे भेंट करके पूछा तब उसने बताया कि–''पण्डितजी की आवाज़ से ही गदगद हो उठा। मेरे भाव कुछ अतिरिक्त ही जागृत हुए। लेकिन असहय नहीं हुए।''[8] इस प्रकार भक्ति रस उत्पन्न करने वाले शब्द और पण्डितजी की आवाज़ ने श्रोतागण को भी मंत्रमुग्ध कर दिया। अतः मन की एकाग्रता तथा आध्यात्मिक साधना में भी संगीत का प्रयोग मुख्य रूप से किया जाता है।

महर्षि अरबिंदो के कथानुसार–''संगीत एक आध्यात्मिक कला है जो सदैव धार्मिक भावनाओं तथा आंतरिक जीवन से संबंधित रहती है।'' अध्यात्म, धर्म, भक्ति आदि का संबंध मानवी मन के भावों से हैं और संगीत भी मनुष्य के हृदयगत भावों की अभिव्यक्ति है। प्रो. स्वतंत्रबाला शर्मा के अनुसार ''संगीत एक यौगिक विद्या है, जिसकी तीव्र और तीव्रतर ध्वनियां स्नायुओं को झकृंत कर सुषुप्त कुंडलिनी को जाग्रत कर देती है तथा मनुष्य को आत्मानुभूति की चरमसीमा 'मोक्ष' के द्वार तक पहुंचा देती है। हमारे प्राचीन योगियों के अनुसार अध्यात्म मार्ग में 'समाधि' की प्राप्ति परम लक्ष्य है और योग मार्ग द्वारा उसे प्राप्त करने के लिए पातंजल योगसूत्र में अष्टांग योग का विधान है। वैसे ही संगीत साधना करते वक्त जिन स्वरों एवं रागों का अभ्यास करने पर चित्त को धारणा की अवस्था प्राप्त होती है तो पूर्ण एकचित्त होकर श्रद्धा एवं समर्पण से साधना करने पर समाधि अवस्था की भी अवश्यमय प्राप्ति हो सकती है। उच्च कोटी के कलाकारों के संबंध में सुर में 'खो जाने' की या 'डूब जाने' की बातें श्रुत है। यह 'खो जाना' या 'डूब जाना' शब्द समाधि का ही भाव प्रकट करता है।

मनुष्य जीवन सुख–दुख का सम्मिश्रण है। अतः जन्म से मृत्यु तक कलाकार इस सुख–दुख की संमिश्र अवस्थ में रहता है। कलाकार जब संगीत के माध्यम से अभिव्यक्त होता है तब उसे स्वयं का ही अविष्कार होता है और भाव–विभोर हो जाता है। अर्थात् कुछ समय के लिए ही सही वह स्वयं को भूल जाता है तब उसे आत्मानंद की प्राप्ति की अनुभूति मिलती है। इस प्रकार साधना करते–करते अपनी नित नये सृजन से कलाकार मनुष्य जीवन एवं उसके उद्देश्य को जानकर एक उच्च आनंदाभूति में विश्राम तथा शांति का अनुभव लेता है। आध्यात्मिक साधना से भी मनुष्य ऐसी ही शांति एवं आत्मानंद का अनुभव लेता है। इस प्रकार से संगीत के द्वारा परमात्मा से संबंध प्रस्थापित किया जा सकता है। संगीत के माध्यम से अपने आराध्य के साकार रूप में या निर्गुण निराकार

ब्रह्म में तादात्म्य प्रस्थापित करने वालों के कई उदाहरण इस भारतवर्ष में प्रमाण स्वरूप माने जाते हैं उनमें से कुछ संत–तुलसीदास, तुकाराम, कबीर, मीराबाई, गुरु नानक जिन्होंने अपनी भक्ति साधना से ही अध्यात्म ज्ञान प्राप्त किया।

हमारे भारतीय चिंतन धारा के अनुसार कोई भी विद्या या कला का उद्देश्य 'मुक्ति' है। अर्थात् संगीत जैसी महान कला की साधना केवल मनोरंजन नहीं परंतु आत्मरंजन की अनुभूति करती है। शास्त्रीय संगीत की पुरानी एवं परंपरागत रचनाएं है जिनमें बहुत–सी रचनाएं अध्यात्म के विषय से जुड़ी है। इनमें से कोई नाद से संबंधित है, किसी में मानव शरीर को गात्र वीणा मानकर कुंडलिनी शक्ति का वर्णन है तो किसी में सूक्ष्म शरीर की ग्रंथियों का वर्णन है। भातखंडेजी क्रमिक पुस्तिका से यह ज्ञात होता है कि ये रचनाएं मध्यकाल संतो की हैं। संगीत रत्नाकर में संगीत की महत्ता प्रकट करता हुआ तथा कुंडलिनी शक्ति एवं चक्रों से संबंधित श्लोक दिया है।

निष्कर्ष

उपरोक्त अधिकारी पुरुषों के विचार तथा वाणी का अध्ययन करने के बाद शोधार्थी मानता है कि संगीत और अध्यात्म का परस्पर संबंध है। इतना ही नहीं बल्कि आध्यात्मिक उन्नति के लिए संगीत विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। हमारे भारतीय शास्त्रीय संगीत के कई राग ऐसे हैं जिनके 'मूल स्वर' ही 'भक्तिमय' है। जैसे– तोड़ी, भैरव, ललत, भैरवी, चारूकेशी, परमेश्वरी आदि। इन सभी रागों से जनित फिल्म संगीत में भी भक्ति का भाव अनुभूत होता है। अर्थात् स्वयं राग (उसके परिसीमन के साथ) अर्थपूर्ण–भावपूर्ण शब्द तथा आत्मानंदी सुर इन तीनों का मिश्रण ही 'भक्ति संगीत' है, जिससे भक्ति की अनुभूति महसूस होती है।

इसके अलावा हमारे सभी आध्यात्मिक उन्नत संत (जिन्होंने संगीत के उपयोग से आत्मानंद की प्राप्ति की) उनके रचित दोहे, भजन या कोई भी भक्तिपूर्ण रचना, जो संगीत के शास्त्रीय पक्ष के सम्मत न भी हो, फिर भी उसे समर्पण भाव से गाने से परमानन्द की अनुभूति महसूस की जा सकती है। केवल भक्तिपूर्ण शब्द ही भक्ति की उत्कटता के लिए पर्याप्त नहीं है। उसमें भाव का होना अत्यंत आवश्यक है। यही योग है– शरीर और मन का और योग से ही आध्यात्म की शुरुआत होती है। धीरे–धीरे इसी में आत्मा के जुड़ने पर मनुष्य अपने अंतिम लक्ष्य का चयन कर सकता है। गान सरस्वती किशोरी अमोणकर ने अपने ''स्वरार्थरमणी'' नामक पुस्तक में लिखा है कि संगीत में अद्वितीय निर्मिती की अभिव्यक्ति होती है, स्वयं के अस्तित्व की भावना भी भूल जाते हैं, स्थलकाल से परे मन की अवस्था समाधिवत् हो जाती है और इस क्षण के आत्मानंद की स्मृति सदैव जागृत रहती है और हर वक्त वही अनुभूति का अनुभव कराती है।

पाद टिप्पणी

1) आचार्य, श्रीराम. शर्मा. शब्द ब्रह्म–नाद ब्रह्म. पृ. 3
2) चौबे, डॉ. सत्येन्द्र. कुमार. अनहद की झंकार. पृ. 73
3) मिश्रा, डॉ. नम्रता. संगीत तीर्थ मथुरा और काषी. पृ. 23
4) चौबे, डॉ. सत्येन्द्रकुमार. अनहद की झंकार. पृ. 37
5) चौबे, डॉ. सत्येन्द्रकुमार. अनहद की झंकार. पृ. 37
6) मिश्रा, डॉ. नम्रता. संगीत तीर्थ मथुरा काषी. पृ. 32
7) तुलसीदास, स्वामी. श्रीरामचरितमानस. गीत प्रेस, गोरखपुर.
8) पोतदार, वसंत. भीमसेन. पृ. 147

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
ISSN 2320–7175 | Volume 09, Issue 01, June 2021
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2021
UGC CARE listed Journal

सन्दर्भ

आचार्य, श्रीराम. शर्मा. और शर्मा, भगवती. देवी. (संवत् 2054). सामवेद संहिता. युगान्तर चेतन प्रेस, हरिद्वार.
आमोनकर, किशोरी. (2017). स्वरार्थमणी रागरस सिद्धांत. राजहंस प्रकाशन.
चिन्मयानंद, स्वामी. (2012). नारद भक्ति सूत्र. सेंट्रल चिन्मय ट्रस्ट.
तुलसीदास, स्वामी. (2013). श्रीरामचरितमानस. गीता प्रेस, गोरखपुर.
मुक्तानंद, स्वामी. (2011). चित्तशक्ति विलास. सिद्धयोग प्रकाशन मराठी आवृत्ति.
योगानन्द, परमहंस. (2005). योगी कथामृत. योगदा सत्संग सोसायटी ऑफ इंडिया–सेल्फ रियलाइजेशन फेलोशिप.